विचारहीनता के दलदल में बदलाव कैसे ?

-मनोज कुमार झा

ऐसा लगता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नेतृत्व में साम्प्रदायिक और विघटनकारी ताकतें खुल कर नंगा नाच दिखाने को तैयार है। सत्ता हासिल करने के लिए ये फ़ासीवादी संगठन किसी हद तक जा सकते हैं, ऐसा हमने इतिहास में देखा है और अभी भी देख रहे हैं। ये संगठन खासकर किशोरों और युवावर्ग को प्रभावित कर अपने पाले में लाने की कोशिश करते हैं और उनके दिलो दिमाग में घृणा का ज़हर बो देते हैं। ये उन्हें तर्कबुद्धिवाद और वैज्ञानिक विचारों से दूर करने की कोशिश करते हैं।

आज समाज में विचाहीनता का बोलबाला बढ़ता जा रहा है। ऐसी ताकतें काफ़ी मजबूत हो गई हैं जो तर्कपरकता, वैज्ञानिक सोच ओर बुद्धिवाद पर लगातार हमले कर रही हैं। लगता है, यह सब संगठित और योजनाबद्ध तरीके से किया जा रहा है। भारतीय जनता पार्टी के सत्ता में आने के बाद विचार पर हमले में तेज़ी आई है। कई विद्वानों, संस्कृतिकर्मियों और तर्कबुद्धिवादियों पर हमले किये गए, उनकी हत्या की गई और आज भी उन्हें सत्तापक्ष से जुड़े व्यक्तियों और संगठनों द्वारा धमकियां दी जा रही हैं। वैचारिक रूप से प्रगतिशील तबके पर हर जगह खतरा मंडरा रहा है, लेकिन इसके प्रतिकार का कोई कारगर प्रयास नज़र नहीं आ रहा।

ऐसा लगता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नेतृत्व में साम्प्रदायिक और विघटनकारी ताकतें खुल कर नंगा नाच दिखाने को तैयार है। सत्ता हासिल करने के लिए ये फ़ासीवादी संगठन किसी हद तक जा सकते हैं, ऐसा हमने इतिहास में देखा है और अभी भी देख रहे हैं। ये संगठन खासकर किशोरों और युवावर्ग को प्रभावित कर अपने पाले में लाने की कोशिश करते हैं और उनके दिलो दिमाग में घृणा का ज़हर बो देते हैं। ये उन्हें तर्कबुद्धिवाद और वैज्ञानिक विचारों से दूर करने की कोशिश करते हैं। यह काम ये बरसों से कर रहे हैं और अब देश की सत्ता हासिल कर लेने के बाद इनकी विघटनकारी गतिविधियों में तेज़ी आई है।

हमेशा खासकर, चुनाव के मौकों पर ये ऐसे मुद्दे उभारने की कोशिश करते हैं जिनसे अलग-अलग धार्मिक समुदायों के बीच घृणा का प्रसार हो सके और धर्म के आधार पर साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण कर वे चुनाव जीत पाने में सफ़ल हो सकें। अपने इस प्रयास में उन्हें अपेक्षित सफलता भी मिल रही है। पहले भी इन्हें सफ़लता ऐसे ही मिली है और आगे भी मिलेगी, यह उन्हें पता है । इसलिए इतिहास, संस्कृति, धर्म दर्शन आदि की गलत व्याख्या कर युवा पीढ़ी को गुमराह करना इनका लक्ष्य है। भूलना नहीं होगा कि वोट देने वालों में अधिक संख्या आज युवाओं की ही है।

भाजपा जब भी केन्द्र की सत्ता में आई, उसने सबसे पहले इतिहास के पाठ्यक्रम में बदलाव करने की कोशिश की, वैज्ञानिक तथ्यों को हटा कर इतिहास के नाम पर, झूठी कहानियां परोसने की कोशिश की। महान साहित्यकारों की रचनाओं को पाठ्यक्रम से हटाकर उनकी जगह औसत और घटिया दर्जे के साहित्यकारों की रचनाएं सिर्फ़ इसलिए लगा दी कि वे आरएसएस की विचारधारा में यकीन करते हैं। गुजरात जैसे राज्य में जहां काफ़ी पहले से भाजपा यानी आरएसएस सत्ता में है, स्कूली पाठ्यक्रम में पूरी तरह ज़हर घोल दिया गया है। बहुत ही अवैज्ञानिक किस्म की बातें पढ़ाई जा रही है और मानसिक रूप से विकलांग पीढियां सामने आ रही हैं। संघ शुरू से ही इतिहास का इस्तेमाल लोगों में साम्प्रदायिक विद्वेष की भावना भड़काने के लिए करता आ रहा है। इसके इतिहासकारों, विचारकों, साहित्यकारों और बुद्धिजीवियों की अलग मंडली है, जिन्हें पहले तो कोई पूछता नहीं था, पर अब नरेन्द्र मोदी के सत्ता में आने के बाद ये शहजोर हो गए हैं और वैज्ञानिक विचारधारा पर कुठाराघात करने का कोई मौका नहीं चूकते। देश के बड़े-बड़े शोध-संस्थानों, साहित्य-कला अकादमियों, विश्वविद्यालयों एवं राष्ट्रीय महत्व के अन्य संस्थानों में भगवा बुद्धिजीवियों को बैठा दिया गया है जो आरएसएस के एजेंडे को लागू करने की पुरज़ोर कोशिश में लगे हैं। जाहिर है, जब तक इनकी सत्ता रहेगी, ये ऐसा करते ही रहेंगे। फ़िलहाल, इनके सामने कोई चुनौती भी नहीं है। दूसरी, महत्त्वपूर्ण बात है कि भाजपा सत्ता में रहे या नहीं रहे, आरएसएस के संगठन शिक्षा एवं संस्कृति के क्षेत्र में लगातार योजनाबद्ध तरीके से काम करते रहे हैं। लंबे समय से देश के नौनिहालों के दिमाग में ये जहरीली साम्प्रदायिक विचारधारा भरते रहे हैं। शिशु शिक्षा मंदिर से लेकर शिक्षा भारती एवं अन्य कई संगठन हैं जो अखिल भारतीय स्तर पर फ़ैले हैं। इनसे शिक्षा हासिल कर जो निकलते हैं, जाहिर है, उनकी सोच संकीर्ण और विचारधारा जहरीली होती है। देश में भाजपा और संघ परिवार के मुस्लिम विरोधी अभियान का समर्थन करने और उसके पक्ष में हवा बनाने वालों में ऐसे ही लोगों की संख्या सबसे ज़्यादा होती है। ऐसे लोग शिक्षा, प्रशासन, प्रौद्योगिकी, वैज्ञानिक संस्थाओं में भारी तादाद में हैं और आबादी के अन्य तबकों पर भी अपना असर डालने में कामयाब होते हैं। ग़रीब और अनपढ़ आबादी इनकी बातों को चुपचाप स्वीकार कर लेती है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता। इससे भी इनकार किया जाना सम्भव नहीं कि आरएसएस की विचारधारा के प्रभाव में देश की अच्छी-खासी आबादी है और इसमें नौवजवानों की संख्या ज़्यादा है जिनमें विचारहीनता और विवेकशून्यता हाल के दिनों में काफ़ी बढ़ी है। निम्न मध्यवर्गीय बेरोजगार युवाओं पर भी आरएसएस की विचारधारा का अच्छा-खासा प्रभाव है जो लम्पट तत्व में तब्दील हो गए हैं। ससाम्प्रदायिक दंगों, लूटपाट, आगजनी और स्त्रियों के साथ बलात्कार में इनकी भूमिका बढ़-चढ़ कर रहती है। अफ़वाहें फ़ैलाने में भी ये वर्ग सबसे आगे होता है।

दुखद है कि देश में ऐसे विचारहीन तत्वों का असर बढ़ता ही चला जा रहा है और इनकी काट के लिए किसी तरह का कोई संगठित प्रयास दिखाई नहीं पड़ रहा। ऐसे में, देश में फ़ासीवाद के पूर्ण उभार के लिए ज़मीन पूरी तरह से तैयार दिख रही है।

कांग्रेस एवं अन्य मध्यमार्गी तथाकथित सेक्यूलर दल जो वास्तव में जातिवादी राजनीति करने वाले दल हैं, आरएसएस की साम्प्रदायिक विचारधारा की चुनौती का सामना कर पाने में असमर्थ हैं। इसकी वजह ये है कि इनका भी सामाजिक आधार वही है, जो आरएसएस का है। इन दलों को भी पूरी तरह धर्मनिरपेक्ष नहीं कहा जा सकता, क्योंकि ये हिंदू साम्प्रदायिकता की जगह अल्पसंख्यक साम्प्रदायिकता का सहारा लेते हैं। जनता दल, राजद, सपा, बसपा और अन्य दल खुलकर जातिवाद और अल्पसंख्यकवाद का सहारा चुनाव जीतने के लिए लेते रहे हैं। जहां तक कांग्रेस का सवाल है, यह एक ऐसी पार्टी रही है जो मौके के अनुसार अल्पसंयक और बहुसंख्यक साम्प्रदायिकता का सहारा लेती रही है, यद्यपि अब आकर इसका अल्पसंख्यक वोट बैंक पूरी तराह खत्म हो चुका है, अन्य तबकों में भी आधार खत्म हुआ है और पार्टी अस्तित्व के संकट से जूझ रही है।

देश में साम्प्रदायिकता की समस्या के प्रमुख अध्येता प्रो. हरबंस मुखिया ने कहा था कि अल्पसंख्यक साम्प्रदायिकता और बहुसंख्यक साम्प्रदायिकता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व नहीं हो सकता। दुर्भाग्य से देश में वामपंथी दलों ने भी इस बात को समझने की जरूरत महसूस नहीं की। वामपंथी पार्टियां भी चुनावी राजनीति में अन्य दलों की भांति जाति और छुपे तौर पर धर्म के मुद्दे को भुनाने से बाज नहीं आईं। साम्प्रदायिकता के प्रश्न पर भी इन्होंने अनैतिहासिक दृष्टिकोण अपनाया, जो धर्म के नाम पर देश-विभाजन का समर्थन करने, उर्दू को मुसलमानों की भाषा मानने और प्रगतिशील लेखक संघ में हिंदी और उर्दू अलग-अलग संगठन बनाने में दिखाई पड़ता है।

चुनाव लड़ने के अलावा, वामपंथी दलों ने शिक्षा, संस्कृति एवं अन्य सामाजिक क्षेत्रों में कुछ भी रचनात्मक प्रयास करने की जरूरत नहीं समझी। अगर आरएसएस की तरह इन्होंने भी गांव-गांव शहर-शहर में अपने स्कूल खोले होते, पुस्तकालय और सांस्कृतिक केंद्रों की स्थापना की होती, जिसके लिए इनके पास संसाधनों की कमी नहीं थी, तो आज देश में आरएसएस की जहरीली विचारधारा को चुनौती देने के लिए विचारशील और प्रबुद्ध नौजवानों की भी एक पीढ़ी मौजूद होती।

सामाजिक बदलाव सिर्फ़ राजनीतिक गतिविधियों और चुनाव से नहीं होते। इसके लिए जनचेतना में सकारात्मक बदलाव जरूरी है। इसके लिए सामाजिक-सांस्कृतिक आन्दोलनों की जरूरत है। इन आन्दोलनों से ही वह वैचारिक जन जागरण सम्भव है जिसके आधार पर सार्थक व्यवस्थागत परिवर्तन के लिए संघर्ष शुरू हो सकता है।

जामा मस्जिद में बुखारी गैंग की बेलगाम गुंडागर्दी

जामा मस्जिद और उसके आस-पास का इलाक़ा किस तरह से बुखारी गैंग के क़ब्ज़े में है और किस तरह से वे वहाँ गुण्डई और बद्तमीज़ी के बल पर उगाही कर रहे हैं यह, जब भी मैं जामा मस्जिद जाता हूँ तो बड़ी शिद्दत से महसूस करता हूँ। पुरानी दिल्ली के गली-कूचों में भटकना, खाने-पीने के नये-नये ठौर खोजना, पुराने ज़माने के कुछ लोगों से मिलना, उनसे गप्पे लड़ाना, उनकी कहानियाँ सुनना, पुरानी हवेलियों के सहन में चुपचाप खड़े होकर उन्हें निहारना और उन लोगों की कल्पना करना जो कभी शान व शौकत से उन हवेलियों में रहते होंगे, 1947 के उन तनाव भरे अजीब, उदास और इतिहास के सबसे त्रासद दिनों की बातें सोचना जब बहुत से लोगों को अपनी-अपनी ज़मीनों से उजड़ना पड़ा और उस उजड़ने के क्रम में इस पुरानी दिल्ली को बहुत से नये मेहमानों का स्वागत करना पड़ा जिन्होंने अपनी संस्कृति, भाषा और आचार-व्यवहार के नये रंग भी इस दिल्ली की हवाओं में घोल दिये और इसे कुछ और हसीन बना दिया।

यह सब करते हुये बजाये इसके कि यहाँ (ख़ास तौर पर जामा मस्जिद के इलाक़े में) गन्दगी का अंबार है, बजाये इसके कि भिखारियों की अजीब-अजीब सदाओं से इस इलाक़े की आबोहवा भरी रहती है, बजाये इसके कि ट्रैफिक और भीड़ के चिल्लपों के बीच कब किसका कौन सा सामान ग़ायब हो जाये, कहा नहीं जा सकता, मैं अक्सर ख़ुश रहता हूँ। लेकिन मेरी यह ख़ुशी तब काफ़ूर हो जाती है जब मुझे जामा-मस्जिद के अंदर जाना पड़े (जिसे मैं अपनी सामर्थ्य भर टालने की कोशिश करता हूँ।) वहाँ गेट पर मौजूद मौलाना बुख़ारी के गुण्डे आने-जाने वालों से जिस बद्तमीज़ी से बात करते हैं उसपर उन्हें थप्पड़ मारने का मन करता है।

आज मैं अपने दो छात्रों और एक महिला गाइड के साथ चाँदनी चौक घूमते

हुये जामा मस्जिद पहुँचा। गाइड को पूर्व में ही वहाँ ऐसे कटु अनुभव हो चुके थे कि उसने अंदर जाने से मना कर दिया। मैंने कैमरे वग़ैरह बाहर रख दिये क्योंकि हमें पता था कि कैमरों के नाम पर दस-बीस-पचास-साठ नहीं बल्कि पूरे तीन सौ रूपये ग़ैर क़ानूनी तौर पर वहाँ लिये जाते हैं। जब हम गेट नंबर तीन पर पहुँचे तो उन्होंने बहुत ही बद्तमीज़ी से हमसे तीन-तीन सौ रूपये माँगे। जब मैंने पूछा किस बात के पैसे तो बताने के बजाये वे एक बोर्ड की तरफ़ इशारा करने लगे जहाँ कैमरे के लिये तीन सौ रूपये लिखा हुआ था। मैंने उन्हें बताया कि हमारे पास कैमरा नहीं है तो उन्होंने मोबाइल फोन की तरफ़ इशारा किया। मैंने कहा कि मोबाइल के लिये तो कोई चार्ज पहले नहीं होता था और यह भी बताया कि हम फोटो नहीं खींचेंगे तो उन्होंने निहायत ही बद्तमीज़ी से कहा कि हम जब मर्जी चार्ज लगा देते हैं। मोबाइल के साथ जाना है तो तीन सौ रूपये दो वर्ना मोबाइल बाहर रख कर आओ। संयोग से हमारे पास ऐसी सुविधा थी कि हम मोबाइल आदि बाहर छोड़ सकते थे लेकिन उनकी तरफ़ से मोबाइल, कैमरे आदि सुरक्षित रखने का कोई इंतज़ाम नहीं है।

दरअसल, यद्यपि मेरे दोनों छात्र भारतीय मूल के थे, हमारे साथ गाइड को देखकर उन्हें अंदाजा हो चुका था कि वे भारतीय नहीं हैं। और इसलिये उन्होंने तुरंत मोबाइल के लिये तीन-तीन सौ रूपये माँगे जबकि दूसरे भारतीय लोग मोबाइल के साथ आराम से अंदर आ-जा रहे थे और फोटो भी खींच रहे थे। फिर उन्होंने मेरी छात्रा को एक ऐप्रैन पहनने के लिये मजबूर किया जबकि वह पूरे ड्रेस में थी। और उस गंदे ऐप्रैन के उन्होंने सौ रूपये किराया लिया। वह ऐसा ऐप्रैन है कि अगर आप चड्डी-बनियान पहन कर और वह ऐप्रैन पहन कर अंदर जाते हैं तो आपकी चड्डी-बनियान हर वक़्त दिखती रहेगी। मतलब जिस्म ढँके या न ढँके, उन्हें सौ रूपये मिलने चाहिये।

यह एक बानगी भर है। इस तरह की बहुत सी उगाहियाँ वहाँ चल रही हैं। बुख़ारी एण्ड गैंग पूरी तरह से हरामख़ोरी कर रहा है। पता नहीं ऐसे हरामख़ोरों के पीछे पढ़ी जाने वाली नमाज़ियों की नमाज़ क़ुबूल भी होती है या नहीं ?

- सईद अयूब

इस्लाम की कुंजी

ला इकराहा फीद्दिने इस्लाम की सबसे बड़ी कुंजी थी... मुहम्मद साहब ने जब यह वाक्य कहा कि इस धर्म में कोई जब्र नहीं होगा दुनिया इस्लाम की दीवानी हो उठी अपना सदियों पुराना सडा गला धर्म छोड़ इस ओर आ गई.... लेकिन दिया क्या आपने ????

आप दो नावों में पैर रखकर चलना चाहते हैं.... मुझे हूरों को लेकर प्रोवोक किया है आपने तो हूरों पर ही आते हैं..... रसूल ने कोई एक ही कांसेप्ट डिजाईन किया होगा या तो सेक्स को गुनाह बनाया होगा या तो ओपन सेक्स को वारीयता दी होगी.... लेकिन मुसलमान थोड़ा-थोड़ा सब कुछ खाना चाहते हैं..... एक टाइम पर एक साथ बहुत सी बीवियां रखो, लेकिन उन्हें फुल राइट्स भी दो.. लेकिन नहीं तब तीन बार तलाख बीच में घुसेड देंगे..... ओपन सेक्स करो किसने रोका है लेकिन तब मुताह को बुरा करार देने लगेंगे..... औरत को शादी के मसले में पूरी आजादी देने की बात रसूल ने कही है लेकिन फिर पीरियड्स शुरू होने से पहले ही लड़की की शादी कर दो यह हदीस किसने घुसा दी इस्लाम में... 10-12 साल की लड़की अपने हिसाब से अपने डिसीजन लेने लायक हो जाती है??? अपनी बेटी की तरफ देख कर जवाब दीजियेगा..... सेक्स बुरी चीज है मुताह हराम है, ओपन सेक्स हवस है फिर लौंडियों-कनीजों से सम्बन्ध बनानेवाली बात कैसे आ गई इस्लाम में???? औरत इतनी ही बुरी है तो रसूल हूरों के जरिये उसी औरत का लालच क्यूँ देगए आपको ????

आप चाहे जितनी बहस कर लें, जितनी जंगें जीत लें, जितनी मीनारें बना लें..... आप अपने धर्म को खुद ही अलग अलग शिक्षाओं और हदीसों में फंसा चुके हैं.... क्यूंकि मौलाना ने आपको बताया है के दो कंट्राडिक्ट करती हुई हदीस भी रसूलअल्लाह कह सकते थे... (नौज़ोबिल्लाह) और आपको आँख बंद करके वोह बात माननी भी पड़ेगी... क्यूंकि जहाँ अपनी अक्ल लगाई इस्लामी दायरे से बाहर आप....

जाग जाइए... मत शर्मिंदा करिए अपनी आने वाली नस्लों की नजरों में खुद अपने ही रसूल को.... मत थोपिए अपना जबरदस्ती का इस्लाम औरों पर ... ला इक्राहा फिद्दीन।

- हैदर रिजवी